RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-06
June-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

न्यायिक सक्रियता से कार्यपालिका की शक्तियों का ह्रास : एक विवेचन

मो0 फिरोज आलम

शोधार्थी राजनीतिक विज्ञान विभाग बी0 आर0 ए0 बी0 यू0 (मुजफ्फरपुर)

आज के लोकतांत्रिक–कल्याणकारी राज्य में सरकार के विभिन्न अंगा– विधायिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका– का यह दायित्व होता है कि वह अपने अधिकार व शक्तियों, जिसे उन्हें संविधान नें सुनिश्चित कर रखा है, का प्रयोंग बेहतर व कुशलता के साथ करें ताकि समाज व मानव का अधिकाधिक कल्याण हो सके। संवैधानिक व्यवस्था के तहत विधायिका जहां लोक–कल्याणार्थ विधि के निर्माण का अधिकार रखती है, वहीं कर्यापालिका उन्हें वांचित लक्ष्य तक कार्यान्वित करनें का कार्य करता है। न्यायपालियका को न सिर्फ विधायिका के विधि को बल्कि कार्यपालिका आदेश को भी संवैधानिक कसौटी पर समीक्षा का अधिकार भी प्राप्त है। इसके अलावा न्यायपालिका संविधान और व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का संरक्षक भी होता है। लोकतंत्र की मर्यादा और उसकी प्रगति इस बात पर निर्भर करती है कि कितना समंजस्यपूर्ण तरीके से इन अंगों–विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका – ने अपने अधिकारों व शक्तियों का प्रयोग किया है।

भारत जैसे नवोदित राष्ट्र में सबसे प्रमुख समस्या समाज में न्याय स्थापित करने की रही है। इस न्याय का व्यापक स्वरूप है। व्यवस्थापिका और कार्यपालिका जहां सामाजिक व आर्थिक न्याय की स्थपना क लिये लोक कल्याणकारी कदम उठाती है तथा राज्य के नीति–निदेशक तत्वों को धरातल पर उतारने का प्रयास करती है। वहीं न्यायपालिका व्यक्तिगत न्याय के लिये मौलिक अधिकारों को संरक्षण प्रदान करती है। इस मामल पर प्रारंभिक तौर पर केन्द्रीय सरकार एवं सर्वोच्य न्यायालय के बीच तकरार सर्वविदित है। यहां विषय यह है कि न्यायपालिका की सक्रियता किस प्रकार से कार्यपालिका के अधिकारों व काया में हस्तक्षेप किया है और उसके कारण क्या रहे है ?

न्यायिक सक्रियता का अर्थ–

साधारण अर्थों में न्यायपालिका का सक्रिय होना ही न्यायिक सक्रियता कहलाती है। चूँकि, भारतीय संविधान का तथा मूल अधिकारों के संरक्षक का दर्जा न्यायपालिका को संविधान द्वारा प्रदत्त है। इस आधार पर न्यायपालिका का सक्रिय होना एक तरह से रचनात्मक पहल कही जा सकती है।

संवैधानिक दृष्टिकोण से भारत एक लोकतांत्रिक, समाजवादी तथा कल्याणकारी देश है। न्यायिक सक्रियता बदलते समय में न्यायिक दृष्टिकोण की एक गतिशील प्रक्रिया है, जो न्यायाधोशों को प्रेरित करती है कि वे परम्परागत उदाहरणों को अपनाने की अपेक्षा प्रगतिशील दृष्टिकोण और नई भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने एक पत्र को भी रिट याचिका के रूप में उपयाग किया है और उचित आदेश पारित किया है।1979 में न्यायमूर्ति वाई. वो. चन्द्रचूड़ द्वारा अनुच्छेद–32 के अन्तर्गत जनहित याचिका से सम्बंन्धित व्यवस्था की गई। बाद में न्यायमूर्ति पी. एन. भगवती ने मुख्य न्यायधीश को भेजे गए पत्रों को ही जनहित याचिका के रूप में स्वीकार करके न्यायिक सक्रियता को एक नई दिशा प्रदान की।

कार्यपालिका एवं विधायिका दोनों पर जन–दबाब होता है, लोकतंत्र में उनकों हमेशा जनतंत्र के समक्ष यह प्रस्तुत करना होता है कि जनहित में यह किस प्रकार उत्तरोतर कदम बढ़ा रहें है। संवैधानिक दृष्टिकोण से भारत एक लोकतंत्रिक समाजवादी, कल्याणकारी देश है हम यह जानते है कि लोकतंत्र के तीन महत्वपूर्ण स्तम्भ होते हैं– (1) कार्यपालिका, (2) विधायिका, (3) न्यायपालिका।

न्यायपालिका को भारतीय संविधान का रक्षक भी कहा जाता है, लेकिन न्यायिक सक्रियता पर उँगली तब उठ जाती है जब यह कार्यपालिका की अक्षमता को सामने लाकर अनावश्यक रूप से उनके कार्यक्षेत्र में हस्तक्षेप करती है। यह बेहद दुःख की बात है कि न्यायिक सक्रियता की अवधारणा अपनी स्थापना के बाद से ही आलोचकों की जाँच के दायरे में डाल दी गई है। कार्यपालिका के दायित्वों के निर्वहन मे इसके द्वारा अनावश्यक हस्तक्षेप से सर्वोच्च न्यायालय की निर्णायक भूमिका से संवैधानिक संकट उत्पन्न हो सकता है तथा कार्यपालिका के मनोबल में ह्रास आ सकता है। यह दखल कई बार कार्यपालिका के मार्ग में मुश्किलें भी खड़ा कर देता है कि किस प्रकार वह नई परेशानी को नई रणनीति से हल करें। यह अनुमान है कि

RRIJM 2015, All Rights Reserved

न्यायपालिका इस रणनीति के तहत् अपना सम्मान खों देगी। वकीलों नें शिकायतं प्रारम्भ कर दी है कि अदालत का ज्यादा समय जनहित याचिका ले रही है और अदालत के लिए एक पोस्टकार्ड एक पचास पेज के हलफनामे की तुलना में ज्यादा महत्वपूर्ण है जब अदालतों में लम्बित मामलों के आँकड़े भरे पड़े है। ऐसे में मुकदमेंबाजी ने इस नए क्षेत्र के खुलने से भारत में न्यायिक प्रणाली का केवल पतन होगा। हालांकि भारत मैं जनहित याचिका इस आशंका का समर्थन नहीं करती।

एक राय के अनुसार, जनहित का दुरूपयोग निम्न स्तर तक पहुँच गया है। अनेक मामलो के लिए जनहित याचिका दायर की जा रही है जैसे–छात्र और शिक्षक हड़ताल, बसों की कमी, अस्पतालो में साफ–सफाई की कमी, डेंगू बुखार, परिक्षाएं विश्वविद्यालय और कॉलेजों में दखिले आदि। 1997 में केन्द्र में संयुक्त मोर्चा सरकार को दिशा देने की तलाश में कांग्रेस के साथ गठबंधन मंत्रिमण्डल बनाने के लिए एक याचिका वाजपेयी सरकार के विरूद्ध अविश्वास मत अमान्य के लिए दायर की गई।

अनेक न्यायाधीश जनहित याचिका पर ध्यान देते हैं, तो इस कारण केवल शक्ति और प्रचार की भावना नहीं रहती है सुने जाने के अधिकार के नियम के उदारीकरण और समाज के गरीब, पीड़ित और शोषित वर्गों के लिए सामाजिक न्याय की अवधारणा के कारण भी जनहित याचिका न्यायाधीशों को उन मामलों में न्याय करने के लिए प्रेरित करती है। आलोचकों के अनुसार विशेषाधिकार प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त करने के लिए न्यायालय याचिका पर सुनवाई करता है। बहुमत में इतनी याचिका या तो दायर नहीं की जाना चाहिए। या उन्हें सुना नहीं जाना चाहिए। याचिकों समाज के उस खण्ड के मामलों तक ही सीमित रखना चाहिए, जो सामाजिक आर्थिक बाधा के कारण अदालत नहीं पहुँच सकते है। आज हमारे देश में नयायपालिका के द्वारा कार्यपालिका के कार्यों में हस्तक्षेप ज्यादा हो रहा है। इसके उपरान्त कार्यपालिका की क्षमताओं की जाँच कर न्यायालय अपने समय की बर्वादी कर रहा है। इससे सीधा असर लोकतंत्र पर पड़ सकता है, क्योकिं जो कार्य कम समय में लोगों के पास पहुँचना चाहिए, वह न्यायालय के डिब्बों में बन्द होकर देरी से न्यायालय की इच्छाशक्ति पर निर्भर रहता है। ऐसे में कार्यपालिका अपना कार्य समयानुसार सम्पादित नहीं कर पाएगी, जिसके कारण न्यायिक सक्रियता पर से लोगों का विश्वास खत्म हो जाएगा। अतः सामाजिक, आर्थिक एवं लोकतांत्रिक विकास खत्म हो जाएगें।

न्यायिक पुनरावलोकन, मूलभूत ढाँचें की संकल्पना, अनुच्छेद–21 की विस्तृत व्याख्या, कार्यपालिका के स्वविवेक पर नियन्त्रण आदि भारतीय संविधान के तत्व हैं, जो न्यायिक सक्रियता को बढ़ावा देते हैं इसके अतिरिक्त संवेदनशील मुद्दों पर कार्यपालिका और विधायिका की निष्क्रियता, दोनों के उत्तरदायित्व में कमी, जन–समस्याओं के प्रति निष्क्रियता, सार्वजनिक महत्व के मामलों में सही तथ्यों को छुपाना, जिससे भ्रष्टाचार पनपता है तथा लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को क्षति होती है, आदि कारण न्यायिक सक्रियता को प्रभावी बनातें है।

भारतीय संविधन के अनुच्छेद–13,32,226,141 तथा 142 न्यायिक सक्रियता में काफो महत्वपूर्ण हैं –

अनुच्छेद 13 सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक समीक्षा की व्यापक शक्ति प्रदान करता है। न्यायिक समीक्षा का बोध करते हुए न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका की संवैधानिकता की जाँच कर सकता है।

अनुच्छेद 32 मौलिक अधिकारों की गारण्टी देता है। न्यायिक निवारण की माँग के लिए आवेदन–पत्र दाखिल कर सकता है।

अनुच्छेद 226 न्यायिक समीक्षा का प्रयोग करते हुए न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका की संवैधानिकता की जाँच कर सकता है।

अनुच्छेद 141 उच्चतम न्यायालय की शक्ति कानून घोषित करने के लिए है। यह शक्ति अधिनियमित नहीं है, बल्कि कानून का निर्वचन (व्याख्या) करने के अपने काम के दौरान यह कानून को बदलने की शक्ति रखता है।

अनुच्छेद 142 उच्चतम न्यायालय को यह शक्ति है कि वह अपने क्षेत्रधिकार का प्रयोग करत हुए इस प्रकार के आदेश को बनाए कि जिस भी कारण या बात के कारण मुकदमा लम्बित है, तो उन परिस्थितिओं मैं वह न्याय के लिए आदेश पारित करें।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर न्यायिक सक्रियता के सकारात्मक पहलू निम्न प्रकार से देखे जा सकते है–

- जनहित याचिका के माध्यम से कार्यपालिका और विधयिका को समय–समय पर आवश्यक दिशा–निर्देश देना तथा उन पर निगरानी रखना।
- फास्ट ट्रेक कोर्ट के माध्यम से समाज के कमजोर तथा गरीब तबकों तक शीघ्र न्याय पहुँचाना।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

- हवाला काण्ड, पेट्रोल पम्प गैस आवंटन सम्बन्धी न्यायालय को निर्णय से नागरिकों के अधिकारों को प्राप्ति हुई तथा भ्रष्टाचार कम होने लगा।
- यदि मौलिक अधिकारों का, विधायिका द्वारा बनाए गए तथा कार्यपालिका द्वारा लागू किए गए किसी भी अधिकार अथवा आदेश से हनन हो रहा हो तथा इससे संविधान का मूलभूत ढाँचा प्रभावित हो रहा हो, तो इस स्थिति में सर्वोच्च न्यायालय उस अधिकार तथा आदेश को शून्य या असंवैधानिक धोषित कर सकती है, ऐसा देखा गया है।
- न्यायिक सक्रियता पूर्ण न्याय के सिद्धान्त पर कार्य करता है। जैसे–भोपाल गैस त्रासदी में पीड़ितों के लिए मुआवजें हेतु उठाया गया सक्रिय कदम जैसे कई उदाहरण हैं।

न्यायिक सक्रियता की सजगता और कर्तव्यपरायणता इस बात की द्योतक है कि जब किसी परिस्थितिओं मैं संवैधानिक संस्थाएं उच्छृंखल तथा निरंकुश बन जाती है, तो न्यायपालिका अपने अधिकार क्षेत्र से आगे जाकर न्याय को नए सिरे से परिभाषित करती है ताकि जनता की आस्था न्याय में बनीं रहें। वस्तुतः न्याय से आशय मात्र कानूनी न्याय से नहीं होता हैं, अपितु संविधान की प्रस्तावना में वर्णित ''सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय'' से होता है।

समीक्षा

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि न्यायपालिका अपना न्यायिक शक्तियों का प्रयोग मौलिक अधिकारों की रक्षा और देश के नागरिकों की स्वतन्त्रता के लिए करती है। जब कार्यपालिका और विधायिका द्वारा अपने अधिकारों एवं उत्तरदायित्वों का वहन ठीक प्रकार से नहीं किया जाता है, तो न केवल लोगों के बुनियादी अधिकारों पर प्रभाव पड़ता है, बल्कि समाज में अन्याय और अशांति को प्रोत्साहन भी प्राप्त होने लगता है। ऐसे तो देश के विकास क रीढ़ के रूप में कार्यपालिका को ही माना जाता है, क्योंकि लोगों तक सुविधाओं का जाल बिछाने का कार्य न्यायालय के द्वारा नहीं होकर कार्यपालिका के द्वारा ही किया जाता है। किन्तु ,न्यायालय कि अधिक सक्रियता से कार्यपालिका पर अधिक दबाव पड़ता है जिससे इसकी शक्तियाँ प्रभावित होती है जो स्वस्थ राष्ट्र के निर्माण में रोड़ा समझा जाता है। अतः न्यायिक सक्रियता का हस्तक्षेप ज्यादा होना उचित नही कहा जा सकता है।

स्पष्ट है कि संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों का सही इस्तेमाल कार्यापालिका, व्यवस्थापिका एवं न्यायपालिका को करनी चाहिए। लोकतंत्र का ये तीन स्तभ– व्यवस्थापिका, कार्यापलिका तथा न्यायपालिका –पर दायित्व है कि वह लोकतंत्र की रक्षा करें। ऐसे में ज्यादा दिनों तक किसी अंग की शिथिलता के कारण से कोई अंग अपनी सक्रियता दिखाती है, तो वह आलोचना का पात्र बन सकता है। अतः सभी अंगो के बीच सांम्जस्यपूर्ण संबंध एवं शक्तियों का समन्वित प्रयोग जनहित की रक्षा में किया जाना उचित ही कहा जा सकता है। केवल ध्यान यहीं होना चाहिए कि शक्तियों का प्रयोंग होने पर किसी दुसरे अंग के शक्तियों का उल्लघंन नहीं हो सके ।

संदर्भित पुस्तकें –

1. जे0 सी0 जौहरी तथा सीमा जौहरी, 'आधुनिक राजनीति विज्ञान के सिद्धांत' स्ट्रलिंग पब्लिशर्ज प्रा0 लिमिटेड।
2. डी0 डी0 बासु, 'भारतीय संविधान एक परिचय' 18वां संस्करण।
3. सुभाष कश्यप, 'भारतीय संविधान'
4. K.K.Ghai, "Indian Government and Politics" Kalyani Publications, New Delhi, 2008.
5. C.P. Bhambhri, 'Democracy in India' NBT, New Delhi,2007.
6. (3) Peter De Souza, 'The Indian Common Sens of Democracy' Seminar, New Delhi, Aug.2007.

RRIJM 2015, All Rights Reserved